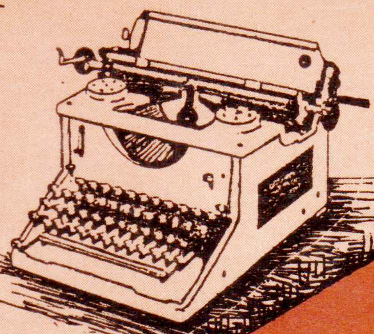

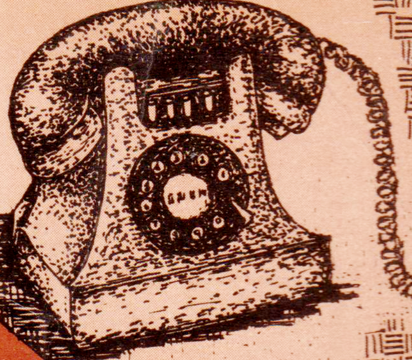

# आविष्कारों की अनोखी दुनिया

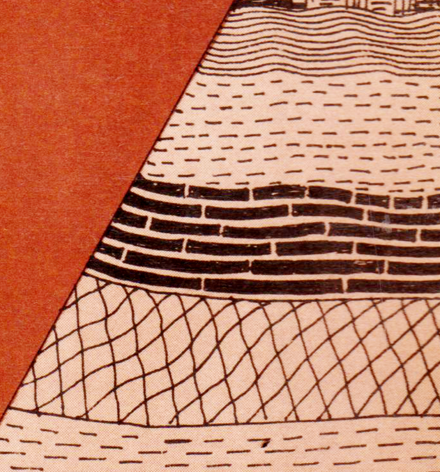

■ पृथ्वी नाथ पाण्डेय

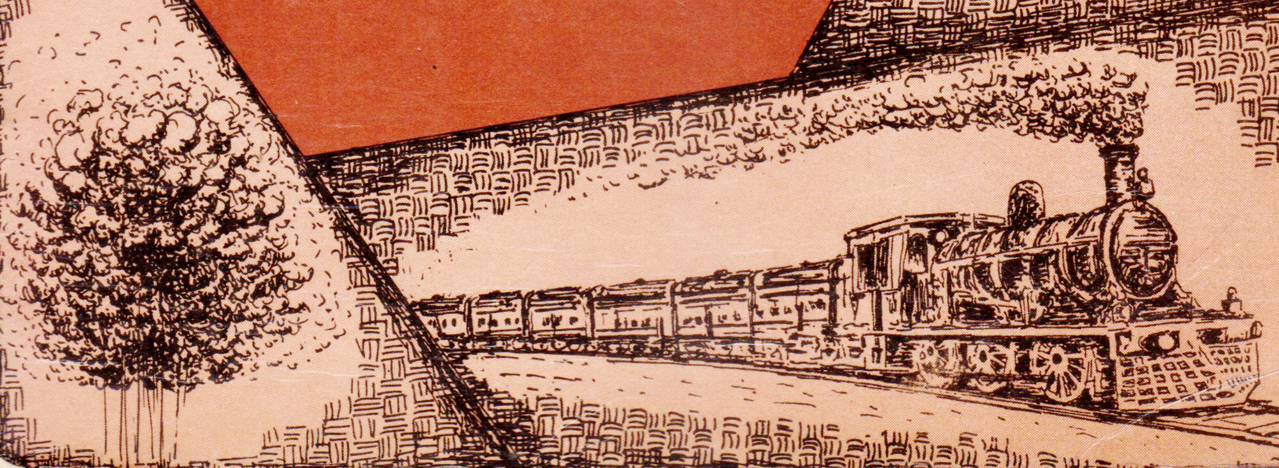

# पृथ्वीनाथ पाण्डेय : पड़ाव-दर-पड़ाव

**प्रमुख सम्पादन-विवरण**

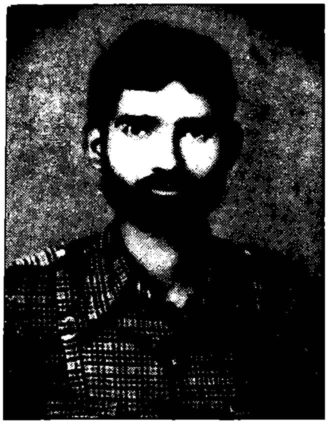

- ☐ साहित्य-सम्पादक : दैनिक जागरण (रीवा-भोपाल) (म. प्र.)
- ☐ सह-सम्पादक : दैनिक भास्कर (भोपाल, म. प्र.)
- ☐ समाचार-सम्पादक : दैनिक सतना टाइगर (सतना, म. प्र.)
- ☐ सहायक सम्पादक : हिन्दी हेराल्ड (भोपाल, म. प्र.)
- ☐ दर्जनों दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, वार्षिक और अनियतकालीन पत्र-पत्रिकाओं के अतिथि-सम्पादक, सम्पादक, स्तम्भकार, समीक्षक।
- ☐ निदेशक : विन्ध्य पत्रकारिता प्रशिक्षण-केन्द्र, (रीवा, म. प्र.)
- ☐ निदेशक : न्यूज-व्यूज एण्ड फीचर सिण्डिकेट ऑफ इण्डिया (म. प्र.)
- ☐ प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में अगणित रचनाओं का प्रकाशन।
- ☐ अभिषदीय लेखक

**प्रकाशित पुस्तकें** : साहित्य की समस्त विधाओं में **50** से भी अधिक पुस्तकें।

**पुरस्कार-सम्मान**

- ☐ वर्ष 1982 में अखिल भारतीय कथाकार का पुरस्कार।
- ☐ वर्ष 1986 में अखिल भारतीय लघुकथाकार का पुरस्कार।
- ☐ वर्ष 1989 में अखिल भारतीय बाल साहित्य का पुरस्कार।
- ☐ वर्ष 1990 में साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्रों में विशिष्ट योगदान के लिए 'सारस्वत-सम्मान'।
- ☐ वर्ष 1990 में बलिया हिन्दी प्रचारिणी-सभा द्वारा 'सारस्वत-सम्मान'।
- ☐ वर्ष 1991 में अखिल भारतीय भोजपुरी भाषा-सम्मेलन द्वारा 'राहुल सांकृत्यायन-सम्मान'।


सम्पर्क-सूत्र

**पृथ्वीनाथ पाण्डेय**

'विचार-विविधा'

110/2, नयी बस्ती, अलोपीबाग,

इलाहाबाद - 211006.

# आविष्कारों की अनोखी दुनिया

पृथ्वीनाथ पाण्डेय

सुलभ प्रकाशन
लखनऊ

प्रकाशक :
सुलभ प्रकाशन
१७, अशोक मार्ग, लखनऊ - २२६००१

लेखक :
पृथ्वीनाथ पाण्डेय

संस्करण :
प्रथम ; 1994

मूल्य :
पच्चीस रुपये

मुद्रक :
आर्मी प्रिंटिंग प्रेस
कैण्ट, लखनऊ

साज-सज्जा :
सुरेन्द्र मेहता

AAWISHKARON KI ANOKHI DUNIYA
[GYAN-VIGYAN]
BY: PRITHWI NATH PANDEY
Rs. 25.00

अपने आत्मीय,

प्रतिष्ठित साहित्य-शिल्पी, पत्रकार

डॉ॰ विष्णु पंकज जी को

सादर

# भूमिका

आओ बच्चो!

यह तुम्हारी अपनी पुस्तक है। इसमें तरह-तरह की ढेर सारी जानकारी भरी पड़ी है। जब पढ़ोगे तब बोल पड़ोगे -- वाह, कितने काम की है यह किताब!

तुम सोच रहे होगे कि मैं "अपने मुँह मियाँ मिट्ठू" बन रहा हूँ।

परमाणु बम, टाइपराइटर, विद्युत्-घण्टी (काल वेल) के बारे में बहुत ही महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गयी है। इनके अलावा और भी कई चीजें हैं, इस पुस्तक में।

तुम इस पुस्तक को पढ़ना फिर बताना : कैसी लगी 'आविष्कारों की अनोखी दुनिया'।

तुम्हारा अपना,

पृथ्वी भइया

(पृथ्वीनाथ पाण्डेय)

# विषय-क्रम


| | | |
|---|---|---|
| 1. | मैं काला हूँ: 'कार्बन' | 1–4 |
| 2. | कितना खतरनाक है 'परमाणु बम' ! | 5–7 |
| 3. | 'मुद्रण–कला' की कहानी | 8–10 |
| 4. | 'टाइपराइटर' का इतिहास | 11–13 |
| 5. | चमत्कारी 'विद्युत्–घण्टी' | 14–16 |
| 6. | 'सेफ्टी पिन' का आविष्कार यों हुआ | 17–18 |
| 7. | कहानी 'पेट्रोलपम्प' की | 19–21 |
| 8. | हलो .... हलो .... हलो ! | 22–24 |
| 9. | 'ब्लैक बॉक्स' क्या हैं? | 25–28 |
| 10. | 'रेलगाड़ी' की कहानी | 29–30 |

# मैं काला हूँ: 'कार्बन'

मैं कौन हूँ। लोग मुझे 'कोयला' के नाम से जानते हैं। तुमने मुझे रेल के इंजन में, अंगीठी में जलते हुए देखा होगा। पानी के जहाज और अन्य कार्यों में भी इस्तेमाल करते हुए देखा होगा। सच तो यह है कि मेरा और इस जीव–समुदाय का जन्म एक साथ हुआ है। दुनिया की उन्नति में मेरा बहुत बड़ा हाथ है।

मुझे मालूम है, लोग मेरे रूप और दुर्गन्ध–पूर्ण धुएँ के कारण मुझसे घृणा करते हैं। यहाँ तक कि तुम्हारे माता–पिता मुझे तुमसे दूर रखते हैं। कम से कम तुम लोग तो मुझे पहचानने का प्रयास करो। तुम्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि मैं मानव–समाज के लिए बहुत ही उपयोगी हूँ।

मेरे कई रूप हैं। हजारों साल से मैं लोगों के तमाम कामों में काम आ रहा हूँ। अफसोस है, लोग मुझे अब भी प्यार से नहीं देखते। शुरू–शुरू में तो मुझे डर बना रहा– कहीं मैं खत्म न हो जाऊँ, लेकिन मुझे अपने गुण पर बहुत भरोसा था।

आखिर मेरा डर दूर हुआ। सन् 1775 ई. की बात है। वैज्ञानिक तेन्वासियो ने सर्वप्रथम यह पता लगाया कि इस धरती पर मैं कई रूपों में मिलता हूं। आश्चर्य तो यह कि मैं ही कीमती हीरा भी हूं। इसके बाद 'तेन्वासियो' ने पता लगाया कि ग्रेफाइट, सुरमा, काजल– ये सब मेरे ही विभिन्न रूप हैं।

इस तरह मेरे बारे में जानने की लोगों की उत्सुकता बढ़ी। धीरे–धीरे मेरा अस्तित्व भोजन, खनिजों तथा पदार्थों में भी खोज लिया गया। इस प्रकार मुझे समाज में आदर–पूर्ण स्थान मिल गया। आज–कल लोगों ने यह भी पता लगा लिया

है कि मेरे यौगिकों की संख्या सभी तत्त्वों के यौगिकों की संख्या से कहीं अधिक है।

मेरे ही अध्ययन के लिए रसायन–शास्त्र की एक पृथक् शाखा: 'कार्बनिक रसायन' का जन्म हुआ। अब तक इसमें कितनी नवीन खोजें की जा चुकी हैं। आज भी तरह–तरह की खोजें की जा रही हैं। अनोखी खोजों के लिए प्रतिवर्ष वैज्ञानिकों के लिए 'नोबेल पुरस्कार' की व्यवस्था की गयी है। हाँ, अभी तक अधिकांश नोबेल पुरस्कार 'कार्बनिक रसायन' में ही मिले हैं।

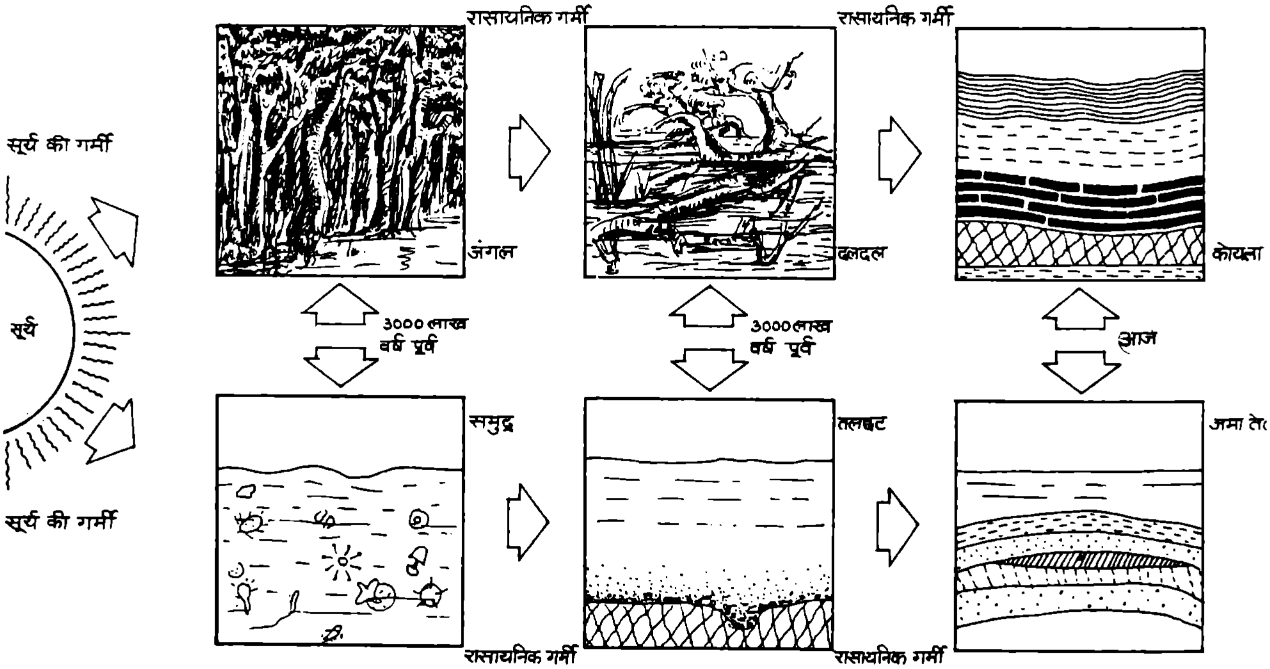


लगभग तीस करोड़ वर्ष पहले मेरा एक–छत्र राज्य था। पृथ्वी पर चारों ओर जंगल ही जंगल थे। तब मैं बड़ी शान से रहता था। अपनी शान–शौकत को देख–देख मैं फूला नहीं समाता था। उस युग का नाम भी मेरे कारण 'कार्बनिक युग' रखा गया।

समय बीतता गया। एक समय ऐसा भी आया, जब मेरी शान को खतरा पहुँचने लगा। धीरे-धीरे मेरे ऊपर कीचड़, कंकड़, पत्थर आदि लाखों वर्षों तक गिरते-दबते चले गये।

पृथ्वी की रासायनिक गर्मी से मेरा हृदय फटा जा रहा था। मुझे यह नहीं मालूम था कि इतने कष्टोंके बाद मैं लोगों के लिए किस रूप में उपयोगी हो सकता हूँ।

मैं अपने गुणों का बखान कहाँ तक करूँ। तुम्हारे शरीर का 90 प्रतिशत मेरे यौगिक हैं। संसार की वस्तुओं के हर एक का 60 प्रतिशत भोजन, वस्त्र, मकान - जहाँ देखो, वहीं मेरे यौगिक हैं। इनमें से कुछ हैं : एल्कोहल, पेट्रोलियम, वसीयौगिक, फिनाल, एरोमेटिक, एसिड इत्यादि।

इस तरह से तुमने समझा कि मेरे कई रूप हैं। मैं लोगों के लिए बहुत ही उपयोगी हूँ। तो आओ मेरे पास और मुझे जी भर कर प्यार करो।

<u>और अब जादुई कार्बन</u>

सच, अब कार्बन के दिन समाप्त हो रहे हैं। 'डुप्लीकेट कॉपी' बनाने के लिए प्रयुक्त होने वाले कॉर्बन पेपरों का विकल्प बाजार में आ रहा है। यह विकल्प पुरानी पद्धति का स्थान ले लेगा।

यह एक विशेष प्रकार का कागज होता है। इसे एक खास प्रकार के प्लाण्ट से एक रासायनिक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। इससे इसमें एक विशेष प्रकार का गुण आ जाता है। इसके ऊपर दबाव पड़ने से यह भरपूर छाप देता है। सामान्य दबाव का इस पर कोई असर नहीं पड़ता।

ऊपर एक सामान्य कागज रखो। नीचे इस वैकल्पिक कॉर्बन को रखो। फिर आराम से लिखते जाओ। कॉपियाँ साफ नजर आयेंगी। इस प्रकार कॉर्बन-पेपर की समस्या ही खत्म हुई। इस कागज को 'कॉर्बन-रहित कागज' (Corbonless Paper) नाम दिया गया है।

फिलहाल, इस कागज का मूल्य अधिक है। बड़े आकार की शीट 225 से 500 रुपये प्रति रिम के हिसाब से मिलेगी।

इस कागज के विभिन्न रूप हैं, विभिन्न रंग भी। इसके बाहर तुम्हें कालापन नहीं दिखेगा। हाँ, कागज के अन्दर ही यह जादुई करामात है।

स्वदेशी तकनीक से इसे फिलहाल नहीं बनाया जा सकता। लिहाजा, एक से दो करोड़ लागत की आयातित मशीनों के द्वारा इसे बनाया जा रहा है। अभी तक इसे बनाने के दो प्लाण्ट नासिक और कलकत्ता में स्थापित हैं। इनकी वार्षिक क्षमता 10 हजार टन 'कार्बन-रहित पेपर' बनाने की है।

इस प्रकार के कागज-उत्पादन की बात विदेशों में कोई खास महत्त्व नहीं रखती। अपने देश 'भारत' में इस कागज का बहुत ही महत्त्व है। इस प्रकार के कॉर्बन-रहित कागजों का इस्तेमाल कई तरह से होता है। जैसे : रसीद बुक, ऑर्डर फॉर्म, बिल बुक, कैशमेमो, टेलेक्स रोलों, वाउचर इत्यादि में इस कागज का भरपूर इस्तेमाल होता है।

# कितना खतरनाक है 'परमाणु बम' !

अगस्त, सन् 1945 ई. की बात है। संयुक्त राज्य अमरीका के उड़ाकों ने जापान के 'हिरोशिमा' नगर पर एक बम गिराया था। वह गजब ढाने वाला 'परमाणु बम' था। ढेर सारे निर्दोष लोग मार डाले गये। उस बम ने 3 लाख 10 हजार की आबादी को पूरी तरह से नष्ट कर दिया था। उसकी लौ सात मील ऊपर तक गयी थी। बड़ी-बड़ी इमारतें कोयला हो गयीं। भयंकर गरमी के कारण लोगों की हालत बहुत खराब थी।

बम गिरा कर जो उड़ाका फुर्ती से वापस आया, उसके विमान को सात मील दूर निकल जाने पर भी जोर का धक्का लगा। उसके साथी डगमगा कर बेचैन हो गये। हिरोशिमा में जो लोहे के मीनार थे, वे गल कर भाप बन गये। इससे जापान के मन्त्रि-मण्डल ने घबरा कर तुरन्त अपने कर्त्तव्य पर विचार किया। हफ्ते भर पहले उन्होंने आखिरी दम तक मुकाबला करने का फैसला किया था। तबाही को देख कर उन्हें अपने निर्णय बदलने पड़े। नतीजा यह हुआ कि उन्हें आत्म-समर्पण करना पड़ा।

तब से लेकर आज तक परमाणु बम को लेकर सारी दुनिया में बड़ी खलबली मची हुई है। विज्ञान के चमत्कार के चलते दुनिया को चौपट कर डालने का हथियार मनुष्य को मिल गया है। इसलिए अब मानव-सभ्यता के लिए खतरा बन गया है।

इस खतरनाक बम को बनाने का काम बहुत ही गुप्त ढंग से किया गया। संयुक्त राज्य अमरीका के 'ऐनसे परगने' में इस काम के लिए एक शहर बसाया गया। उस शहर का नाम रखा गया 'ओक रीज' शहर। वहाँ 74,000 आदमी इस काम में

माथा-पच्ची कर रहे थे। उनमें चार-छह जाने-माने वैज्ञानिक भी थे। उनके अलावा बाकी बिल्कुल साधारण किस्म के थे। मिस्त्री और कारीगरों को जैसा नमूना बताया जाता, वैसा ही सांचा बना देने में वे कुशल थे।

भेद को गुप्त रखने में सभी ने मदद की। उस शहर को फौजी ढंग से बसाया गया था, ताकि किसी को खबर न हो। जासूस तैनात थे। कोई भी ऐसा-वैसा व्यक्ति उधर से गुजर नहीं पाता था। एक हजार हथियार-बन्द सिपाही दिन-रात पहरा देकर चौकसी रखते थे। कुछ मजदूर-कारीगर बातूनी मिलते तो उन्हें उस शहर से अन्यत्र भेज दिया जाता था। अन्त में जुलाई, सन् 1945 ई. में परमाणु बम तैयार हो गया। तब कहीं जाकर 'ओकरीज' के निवासियों की जुबानबन्दी हटी।

संसार का निर्माण 92 तत्वों से हुआ है। उनमें यूरेनियम बहुत कड़ा है। उनका परमाणु टूटना बहुत कठिन है। उसमें बहुत शक्ति है। यूरेनियम के परमाणु पर अन्य जाति के परमाणु का न्यूट्रान गिराते ही वह फूट गया। उसके फूटते ही उसके निजी न्यूट्रान निकले, जो यूरेनियम के भीतर गये। अब बार-बार नये न्यूट्रान निकलते और अपने मुख्य स्थान में तेजी से जाते थे। हर वक्त अधिक से अधिक शक्ति और प्रकाश बढ़ता गया। यूरेनियम के एक घन फुट में से एक सेकण्ड के सौंवे हिस्से में सूर्य-सदृश विलक्षण तेज चमकने लगा। वह शक्ति 10 लाख किलो वाट थी। 150 मील की दूरी पर बैठी अन्धी लड़की को लगा कि इसमें कुछ तेज है। इस प्रकार और शक्ति को काबू में लाकर छोटे-से डिब्बे में रखने और इसको ठीक वक्त पर फोड़ने की कला मालूम हो गयी। इसका परिणाम मालूम हो ही गया।

वैज्ञानिकों को विश्वास है कि परमाणु बम का उपयोग लोक-कल्याण के लिए किया जायेगा। इससे मनुष्य की सुख-सुविधा बढ़ेगी। बर्फ के बड़े-बड़े पहाड़ों को तोड़-फोड़ कर उनके बीच में ही आने-जाने के लिए रास्ता बना लेना परमाणु बम के लिए एक खेल होगा।

वायु-मण्डल की सर्दी-गरमी को घटा-बढ़ा कर इस परमाणु-शक्ति से सहज ही मन के माफिक वायु-मण्डल बना लिया जा सकेगा। मैग्निशियम आदि धातुओं की खानों का पता लगा कर आसानी से हजारों टन धातु निकाली जा सकेगी।

●

# मुद्रण-कला की कहानी

मुद्रण-कला का आविष्कार चीन में हुआ था। विश्व की पहली मुद्रित पुस्तक 'हिराकासूत' सन् 868 ई. में छपी थी। इस पुस्तक को 'वाग चिक' ने लकड़ी के ठप्पे से छापी थी। वे अक्षर बहुत जल्दी घिस कर खराब हो जाते थे। इस कारण लोगों का ध्यान धातु के ठप्पे बनाने की ओर गया। इस कार्य में लगभग 400 वर्षों का समय लग गया।

तेरहवीं शताब्दी में पी.रोग नामक एक चीनी व्यक्ति ने मिट्टी और धातु के टाइप बनाये। सन् 1319 ई. में कोरिया के राजा ने धातु के टाइप बनाने का एक कारखाना लगाया। इस तरह सन् 1409 में उस कारखाने से बनाये कांस्य-टाइप से एक पुस्तक छापी गयी।

पन्द्रहवीं शताब्दि में यह मुद्रण-कला यूरोप पहुँची। जर्मनी के गुटेन वर्ग नामक एक सुनार ने धातु के टाइप बनाये। फिर उसने सन् 1440 ई. में व्याकरण की पुस्तक छापी। सन् 1455 ई. में उसने बाइबिल का प्रकाशन किया।

शुरू-शुरू में सभी देशों में लैटिन की पुस्तकें छापी गयीं। सर्वप्रथम इंग्लैण्ड के विलियम केक्सटन ने सन् 1476 ई. में अंगरेजी भाषा में एक पुस्तक प्रकाशित की। उन दिनों अंगरेजी टाइप जर्मनी में बनते थे।

अपने देश 'भारत' में सन् 1556 ई. में छापेखाने की मशीनें पहुँच गयीं। भारत में छापेखाने के बारे में सन् 1563 ई. में एक पुस्तक छपी। भारत में पहली बार मलयालम-तमिल टाइप सन् 1577 ई. में कोचीन में एक स्पेनिश द्वारा ढाले गये।

उस स्पेनिश का नाम था 'ले ब्रदर'। सन् 1578 ई. तक देश के कुछ अन्य भागों में छापेखाने का इस्तेमाल शुरू हो गया। सन् 1578 ई. में 'मलवारी' (तमिल–भाषा) में 'ईसाई–सिद्धान्त' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की गयी।

सन् 1616 ई. में मलयालम में ' क्रिश्चियन पुराणम् ' नामक पुस्तक प्रकाशित की गयी। इसके बाद ईसाई धर्म–प्रचारक संस्था ने मद्रास और कलकत्ता में छापाखाना लगाया। इसके पीछे उनका उद्देश्य 'सत्य का सन्देश' प्रसारित करना और 'जीवन–ज्योति' जलाना था।

चार्ल्स विल्किस द्वारा 'श्रीमद्भगवद् गीता', 'हितोपदेश' और 'अभिज्ञान शाकुन्तल' का अंगरेजी में अनुवाद किया गया। विल्किस द्वारा तैयार किये गये 'हितोपदेश' का प्रकाशन सन् 1787 ई. में लन्दन में हुआ। सन् 1792 ई. में महाकवि कालिदास की रचना 'ऋतुसंहार' कलकत्ता में प्रकाशित हुई। भारत में देवनागरी लिपि में प्रकाशित यह पहली पुस्तक है। इस पुस्तक के देवनागरी टाइप 'हुगली' में ढाले गये थे। इसके पूर्व भारतीय भाषाओं के टाइप इंग्लैण्ड से आते थे।

सन् 1802 ई. में कलकत्ता से 'मर्सिया', 'माधवानल' और 'सिंहासन बत्तीसी' का प्रकाशन हिन्दी में मुद्रित प्रथम ग्रन्थों में इनका उल्लेखनीय स्थान है। सन् 1803 ई. में 'प्रेमसागर' और 'रामचरित मानस' का प्रकाशन हुआ। सन् 1860 ई. तक 'सिरामपुर' पूर्वी देशों में टाइप–निर्माण का सबसे बड़ा केन्द्र माना जाने लगा।

बम्बई के निजी क्षेत्र में पहला छापाखाना लगाने का प्रयत्न भीम जी पारिख ने किया। वर्ष 1674-75 में इंग्लैण्ड से उन्होंने एक छापाखाना मँगवाया। कारीगरों की कमी तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी–अधिकारियों के असहयोग–पूर्ण रवैये के कारण उनका प्रयोग सफल नहीं हुआ।

पश्चिमी क्षेत्र में भारतीय भाषा का पहला छापाखाना सन् 1812 ई. में लगाया गया। उसे बम्बई के फरदून जी मर्जबान ने लगाया था। सन् 1812 ई. में छापेखाने से 'मराठी–पंचांग' प्रकाशित हुआ। सन् 1816 ई. में 'अमरीकन मिशन प्रेस' की स्थापना

की गयी। उस प्रेस के व्यवस्थापकों ने प्रारम्भ से ही देश में देवनागरी और मराठी के टाइप बनाने का प्रयत्न किया। सन् 1864 ई. में 'निर्णय सागर प्रेस' के मालिक स्वामी जाव जी दादा जी ने अपनी 'भारत प्रसिद्ध फा‍उण्ड्री' की स्थापना की। इससे 'अमरीकन मिशन प्रेस' और 'निर्णय सागर फाउण्ड्री' में नागरी और मराठी टाइपों का स्वतन्त्र रूप से विकास हुआ।

..... और इस तरह मुद्रण-कला का जन्म और विकास हुआ।

●

# 'टाइप राइटर' का इतिहास

लिपि की खोज के सैकड़ों वर्षों तक हमारा लेखन-कार्य कलमों के द्वारा होता रहा। उन दिनों छुट-पुट नोटों से लेकर महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी हाथ से ही लिखे जाते थे। हाँ, इस हस्त-लेखन ने मानव को नित्य-प्रति सुन्दर और कलात्मक बनाने का प्रयास किया।

धीरे-धीरे मनुष्य ने जीवन के हर क्षेत्र को गति और सौन्दर्य प्रदान करने के लिए तकनीकी की खोज की। सोलहवीं सदी के आते-आते तो मनुष्य ने छापेखाने (Press) का भी आविष्कार कर लिया। यह भी एक महान उपलब्धि थी।

छापेखाने के आविष्कार के बाद पुस्तकों की ज्यादा प्रतियाँ कम समय में प्राप्त की जाने लगीं। छापेखाने से लेखन के छोटे-मोटे कार्य तथा छुट-पुट नोट तो नहीं लिखे जा सकते थे। इस कारण मनुष्य को एक ऐसे यन्त्र की आवश्यकता महसूस हुई, जिससे कम समय में सुन्दर और आकर्षक लेखन किया जा सके।

सत्रहवीं सदी के आते-आते इंसानी दिमाग इस दिशा में सक्रिय हो उठा। यूरोप के कई लोगों ने इस यन्त्र को बनाने का प्रयत्न किया, लेकिन इसमें उन्हें कोई खास सफलता नहीं मिली। अलबत्ता इसकी नींव रखी जा चुकी थी।

इस नींव पर सफलता सर्वप्रथम सन् 1717 ई. में ही मिल पायी। ब्रिटिश इंजीनियर हेनरी गिल ने इस यन्त्र की प्रारम्भिक रूप-रेखा प्रस्तुत की। उन्हीं दिनों संयुक्त राज्य अमरीका के विलियम और एक फ्रांसीसी इस लेखन-यन्त्र के

निर्माण में लगे थे। कुछ ही समय में उन्होंने इस यन्त्र को भी तैयार कर लिया। यन्त्रों के काम करने के तरीके इतने धीमे थे कि उनका उपयोग नहीं किया जा सका।

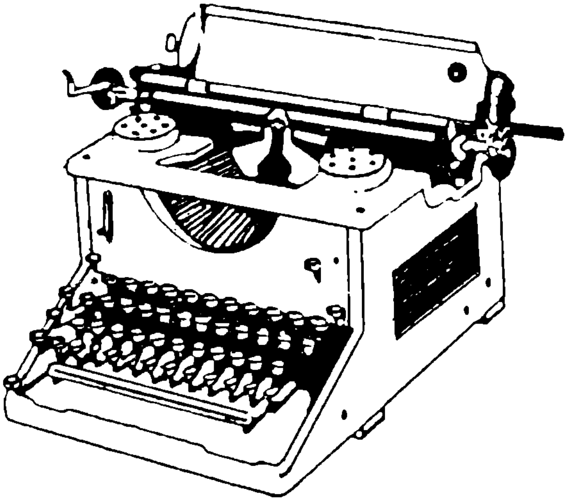

इसके सुधरे रूप की खोज के लिए प्रयास चलते रहे। कई लोगों ने इस लेखन–यन्त्र में सुधार करने के लिए तरह–तरह के प्रयास किये। इस दिशा में सबसे अच्छी सफलता 'फाकाल्ट' नामक एक व्यक्ति को मिली। वह व्यक्ति पेरिस की अन्ध–पाठशाला का शिक्षक था।

'फाकाल्ट' ने सन् 1849 ई. में एक यन्त्र का आविष्कार किया। उस यन्त्र की सहायता से अन्धों को पढ़ना–लिखना सिखाया जाता था। उस यन्त्र का मॉडल ठीक टाइपराइटर की तरह था।

सन् 1850 ई. में 'ऑलिवर टेडी' नामक व्यक्ति ने एक लेखन–यन्त्र का आविष्कार किया। वह व्यक्ति इंग्लैण्ड का निवासी था। उस यन्त्र की उपयोगिता सही रूप में नहीं हो पा रही थी। यही कारण था कि वह यन्त्र कुछ समय बाद लुप्त हो गया।

लेखन–यन्त्र के इतिहास में सन् 1867 ई. के वर्ष को सदा याद किया जायेगा। उसी वर्ष ब्रिटिश–मुद्रक 'क्रिस्टोफर लथम शोल्स' ने सर्वाधिक लेखन–यन्त्र का आविष्कार किया। इसके लिए क्रिस्टोफर को अपने छापेखाने के अक्षरों के टाइपों की सहायता लेनी पड़ी। इस कार्य में उसे फाकाल्ट के लेखन–यन्त्र का भी सहयोग

लेना पड़ा। छापेखाने के टाइपों की मदद से लिख पाने के कारण ही इस यन्त्र का नाम 'टाइप–राइटर' (Type-Writer) पड़ा।

आज दुनिया भर में जिस टाइप–राइटर का इस्तेमाल होता है, वह 'लथम शोल्स' के ही टाइप–राइटर का सुधरा हुआ रूप है। आज तो तरह–तरह के टाइप–राइटर बाजारों में बिकते हैं। एक–से–बढ़कर – एक खूबसूरती वाले टाइप–राइटर देखने में आते हैं।

# चमत्कारी 'विद्युत्-घण्टी'

क्या तुम जानते हो – विद्युत् की घण्टी कैसे काम करती है ? विद्युत्-घण्टी विद्युत् चुम्बकीय प्रभावों के आधार पर बना एक सरल प्रक्रम है। इसका उपयोग कार्यालयों, घरों, उद्योगों आदि में किया जाता है।

विद्युत्-घण्टी में अंगरेजी के 'यू' (U) के आकार का एक विद्युत् चुम्बक होता है। इसके पास ही मुलायम लोहे से बना एक आर्मेचर लगा होता है। इस आर्मेचर के साथ हथौड़ी लगी होती है, जो गोंग से टकरा कर ध्वनि पैदा करती है। यह हथौड़ी गोंग से बार-बार टकराती है। गोंग हथौड़ीनुमा होता है। गोंग आधार के साथ लगा होता है। घण्टी बजाने के लिए एक 'पुश बटन' होता है।

हम घण्टी का पुश बटन दबाते हैं। फिर विद्युत्-चुम्बक की कुण्डली में आर्मेचर स्प्रिग और सम्पर्क पेंच से होती हुई विद्युत्-धारा प्रवाहित होती है। विद्युत्-धारा के प्रवाहित होने से लोहे की कोर चुम्बक बन जाती है। यह विद्युत्-चुम्बक आर्मेचर को अपनी ओर खींचता है। इसमें लगी हथौड़ी गोंग से टकराती है। इस क्रिया से ध्वनि उत्पन्न होती है।

आर्मेचर चुम्बकीय आकर्षण के द्वारा आगे की ओर खिंचता है। जब ऐसा होता है तब वह सम्पर्क-पेंच से अलग हो जाता है। इस प्रकार विद्युत्-सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाता है। इससे विद्युत्-चुम्बक की कुण्डली में विद्युत्-धारा का बहना बन्द हो जाता है। परिणाम यह होता है कि विद्युत्-चुम्बक का चुम्बकत्व समाप्त हो जाता है। ऐसा होने पर आर्मेचर का चुम्बकीय खिंचाव भी समाप्त हो

जाता है। ऐसी स्थिति में सम्पर्क-स्प्रिंग आर्मेचर को अपनी मूल अवस्था में खं लाती है। जैसे ही आर्मेचर अपनी मूल अवस्था में वापस आता है, वैसे ही इस सम्बन्ध सम्पर्क-पेंच से हो जाता है।

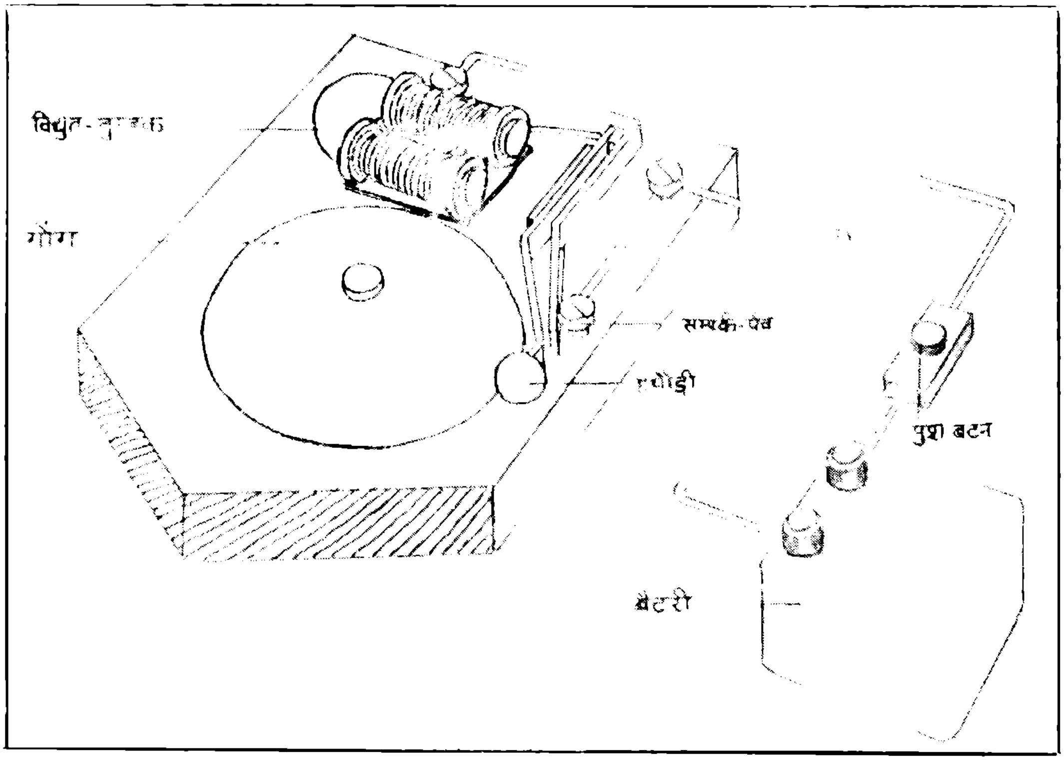


ऐसा होने पर विद्युत्-परिपथ पूरा हो जाता है। इसमें विद्युत्-चुम्बक फि से चुम्बक बनकर आर्मेचर को अपनी ओर खींचता है। इससे हथौड़ी एक बार गं से टकरा कर ध्वनि पैदा करती है। जब तक घण्टी का पुश बटन दबा रहता है त तक यह क्रम बार-बार चलता रहता है।

विद्युत्-चुम्बक बार-बार चुम्बक बनता रहता है। फिर आर्मेचर को अप ओर खींच कर आवाज पैदा करता रहता है। इस प्रकार जब तक बटन दबा रहता बिजली की घण्टी बजती रहती है।

मुलायम लोहे के स्थान पर इस्पात की कोर प्रयोग में लाने पर विद्युत्-धारा प्रवाहित होने लगती है। इससे वह स्थायी चुम्बक बन जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि आर्मेचर हमेशा के लिए चुम्बक की ओर खिंचा रहता है। ऐसी स्थिति में हथौड़ी गोंग से एक ही बार टकराती है और एक ही बार ध्वनि पैदा करती है।

# 'सेफ्टी पिन' का आविष्कार यों हुआ

तुमने 'सेफ्टी पिन' तो देखा ही होगा, इस्तेमाल भी किया होगा। तो क्या तुम्हें मालूम है : 'सेफ्टी पिन' का आविष्कार कैसे हुआ ? 'सेफ्टी पिन' के जन्म की कहानी बहुत ही रोचक है।

संयुक्त राज्य अमरीका में एक दम्पति रहते थे - वाल्टर हण्ट और उनकी पत्नी। पति महोदय बहुत शान्त स्वभाव के थे, लेकिन थे बहुत ही आलसी। इसके बावजूद, वाल्टर हण्ट अपनी पत्नी की हर इच्छा पूरी करने का भरसक प्रयास करते थे। उनकी पत्नी बहुत ही क्रोधी और लड़ाकू किस्म की महिला थी।

एक बार की बात है। वाल्टर हण्ट और उनकी पत्नी कहीं जाने वाले थे। पत्नी ने देखा कि उसकी फ्रॉक का एक बटन टूट गया है। टूटे बटन की फ्रॉक पहन कर भला वह बाहर कैसे जा सकती थी ?

उसने तुरन्त अपने पति को पकड़ा। उसने अपने पति से बाजार से तुरन्त एक नया बटन लाने की जिद की। पति महोदय आलसी तो थे ही। वह भला तुरन्त बाजार कैसे जा सकते थे। वह इसी उधेड़–बुन में लगे रहे-बाजार जाऊँ या नहीं। क्या बिना बटन के मेरी पत्नी बाजार नहीं जा सकती ?

बेचारे पति देवता इसी उधेड़–बुन में काफी समय तक पड़े रहे। अचानक, उनका ध्यान पास ही पड़े तार के एक टुकड़े की ओर गया। उन्होंने तार के उस टुकड़े को तुरन्त उठाया। फिर उसे एक विशेष प्रकार से मोड़कर अपनी पत्नी को देते हुए कहा, "लो, इसे अपने बटन की जगह पर लगा लो।"

पत्नी ने उसे झट लगा लिया।

वाल्टर हण्टर द्वारा दिया हुआ तार बड़े काम का निकला। पत्नी ने जब उस तार को लगा लिया तब उसके पति को बहुत खुशी मिली।

उसी समय उसके दिमाग में 'सेफ्टी पिन' की एक आकृति उभरी। फिर क्या था, उसने उसी तरह के तार के टुकड़ों को बटोरना शुरू कर दिया। थोड़े ही दिन में उसके पास ढेर सारे तार हो गये। फिर उसने उन तारों को मोड़ कर 'सेफ्टी पिन' जैसा-तैसा तैयार करने लगा। उसके बाद वह अपने इस आविष्कार को लेकर एक उद्योगपति के पास गया।

उद्योगपति को वाल्टर हण्ट का यह आविष्कार बहुत पसन्द आया। एक सौ डॉलर में उसने वाल्टर का आविष्कार खरीद लिया। जब यह आविष्कार साफ-सुथरे ढंग से कारखाने से निकला तब उसे नाम दिया गया 'सेफ्टी पिन'।

क्यों रोचक है न 'सेफ्टी पिन' के जन्म की कहानी ?

# कहानी 'पेट्रोल पम्प' की

दुनिया का शायद ही कोई देश ऐसा होगा, जहाँ छोटे-छोटे कस्बों से लेकर बड़े-बड़े नगरों की सड़कों के किनारे पेट्रोल पम्प न हों। आज दुनिया भर में करोड़ों की संख्या में पेट्रोल पम्प हैं। इन पेट्रोल पम्पों को देखकर तुम्हारे मस्तिष्क में तरह-तरह के प्रश्न कौंधते होंगे। है न ? मसलन, अभी एक सदी भी नहीं गुजरी और इतनी तेजी से पेट्रोल पम्पों की संख्या बढ़ती जा रही है।

दर-असल, पेट्रोल पम्प का इतिहास बहुत पुराना है। हाँ, उतना ही पुराना, जितना पेट्रोल के नाम-करण का है। वैसे जब तक पेट्रोल की खोज नहीं की गयी थी तब तक लोग मिट्टी के तेल का इस्तेमाल करते थे।

सन् 1886 ई. में पहली बार सड़कों पर मोटर कार दिखायी दी। उन दिनों तक पेट्रोल की खोज नहीं हो पायी थी। तब तक पेट्रोल के स्थान पर मिट्टी के तेल का प्रयोग किया जाता था। इससे यह भी पता चलता है कि मिट्टी के तेल की खोज पेट्रोल से पहले की गयी थी। मिट्टी के तेल का उपयोग घर में रोशनी करने के अलावा मोटर-कार आदि वाहनों को चलाने में किया जाता था।

आज-कल तो मिट्टी का तेल सरकारी दूकानों पर मिल जाता है, किन्तु पहले ऐसी बात नहीं थी। पहले आज-कल की तरह मिट्टी का तेल सरकारी दूकानों पर नहीं मिलता था। उन दिनों तो मिट्टी का तेल पंसारी की दूकान पर खुले-आम बिकता था। इससे दूकानदार को बहुत परेशानी होती थी। ग्राहक को मिट्टी का तेल नाप कर

देने के बाद उसके हाथ से मिट्टी के तेल की गन्ध आती थी। इस कारण जब वह किसी अन्य सामान को हाथ लगाता था तब उसमें उसकी गन्ध आती थी।

एक पंसारी था। उसका नाम जैक गुम्फर था। उसे हमेशा अपने ग्राहकों से शिकायत सुननी पड़ती थी। जैक गुम्फर का एक दोस्त था, जिसका नाम साइनेलस बासर था। ग्राहकों की शिकायत वाली बात उसने अपने दोस्त साइनेलस बासर को बतायी।

वे दूसरे ही दिन एक टंकी के साथ दूकान पर पहुँच गये। पिस्टन-सिलिण्डर लगी इस टंकी की एक खूबी थी। वह खूबी यह थी कि घुण्डी को ऊपर-नीचे करने से नली के रास्ते से होकर मिट्टी का तेल निकलता था। इस तरह की चमत्कार वाली तारीख 5 सितम्बर, सन् 1885 ई. की थी।

फिर क्या था, इसी विधि से पेट्रोल पम्प के विकास का रास्ता खुल गया।

शुरू-शुरू में इंग्लैण्ड में मोटर कारों और मोटर बोटों में एक अलग ही किस्म का तेल इस्तेमाल किया जाता था। वह तेल भी मिट्टी का ही तेल था। इस तरह से वाहनों में प्रयोग करने के लिए साफ किये गये मिट्टी के तेल का इस्तेमाल किया जाता था। उस तेल को 'लांच स्प्रिट' का नाम दिया गया। साफ किये गये उस तेल को किसी ने 'पेट्रोल' कहा। साफ किये गये उस मिट्टी के तेल को कोई न कोई नाम तो देना ही था। अधिकांश लोगों ने उस अलग किस्म के तेल को 'पेट्रोल' का नाम दिया। इस तरह 'पेट्रोल' का नामकरण हुआ।

'पेट्रोल' को 'भू-तेल' भी कहा जाता है। 'भू' का अर्थ होता है 'पृथ्वी'। ग्रीक भाषा में पेट्रोल शब्द का अर्थ होता है: 'पत्थर का तेल'। इस नाम को लोगों ने बहुत पसन्द किया। इस तरह से एक नये किस्म के तेल के रूप में उभरा 'पेट्रोल'।

जैक गुम्फर का दोस्त साइनेलस बॉसर संयुक्त राज्य अमरीका का निवासी था। साइनेलस उन दिनों पेट्रोल से सम्बन्धित तरह-तरह के प्रयोग करने में लगा हुआ था। कई सफलताओं के बाद वह एक अनोखे प्रयोग में लग गया था। उसने एक

नया प्रयोग किया था। उसका प्रयोग था : वाहनों में पेट्रोल भरने और नापते जाने की प्रक्रिया अपने–आप एक साथ होती जाये।

इस प्रकार का पहला व्यावसायिक प्रयोग 'कैलिफोर्निया' की 'स्टैण्डर्ड ऑयल कम्पनी' ने किया था। सन् 1907 ई. में 'विश्व का पहला पेट्रोल पम्प' 'सीटल' शहर में लगाया गया। धीरे–धीरे समूची दुनिया में पेट्रोल पम्पों की संख्या बढ़ती गयी। आज तो जिधर देखो, उधर ही पेट्रोल पम्प नजर आते हैं।

आज समय की बचत और पैसे की बचत – दोनों दृष्टि से पेट्रोल पम्प का बहुत ही महत्व है।

# हलो ......हलो .....हलो !

इसमें कोई शक नहीं कि आज का युग 'विज्ञान का युग' है। आज हमारे बीच विज्ञान की कई चीजें मौजूद हैं। विज्ञान के चलते कई तरह के आविष्कार हुए हैं। उन्हीं आविष्कारों में "हलो ......हलो ....हलो" यानी 'टेलीफोन' भी शामिल है।

आज हम डायल घुमा कर टेलीफोन से कुछ ही मिनटों में न जाने कहां-कहां बातें कर लेते हैं। सच तो यह है कि आज के वैज्ञानिक युग में इसके बिना हमारा जीवन अधूरा है। हम टेलीफोन (Telephone – दूरभाष) के जरिये दूर-दूर तक बातें कर सकते हैं। क्या कभी तुमने सोचा है – आखिर टेलीफोन का आविष्कार किसने किया ? कैसे किया ? टेलीफोन काम कैसे करता है ?

सच पूछो तो ये सारे सवाल बहुत रोचक हैं। समय की रफ्तार को देखते हुए टेलीफोन अब संसार के लिए कोई अनोखा आविष्कार नहीं रह गया है। इसका आविष्कार प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'ग्राहम बेल' ने किया था। ग्राहम बेल स्कॉटलैण्ड के जाने-माने वैज्ञानिक थे।

टेलीफोन की बाहरी शक्ल से तो तुम परिचित ही होगे। यह एक विशेष प्रकार का डिब्बा होता है। डिब्बे पर 1 से 9 तक की संखया अंकित होती है। डिब्बे पर 'रिसीवर' रखा होता है। यह रिसीवर बड़े काम का होता है। रिसीवर में एक ओर से सुना जाता है और दूसरी ओर से बोला जाता है।

अब तुम्हें समझाता हूँ, इस साधारण आले से ध्वनि दूर-दूर तक कैसे पहुँचती है ?

दर-असल, टेलीफोन में हमारी ध्वनि की तरंगें विद्युत्-तरंगों में परिवर्तित हो जाती हैं। यह क्रिया रिसीवर में ही होती है। हम बोलते हैं। ध्वनि रिसीवर में मौजूद धातु-निर्मित एक पतले तार से टकराती है। यह पर्दा ध्वनि की इन तरंगों को उसी समय लहरों में परिवर्तित कर देता है। फिर उन्हें आगे की ओर धकेल देता है। इस परिवर्तन से ध्वनि का उतार-चढ़ाव अपनी जगह बना रहता है। यही कारण है कि हम जब फोन पर किसी की आवाज सुनते हैं तब कोई विशेष अन्तर समझ में नहीं आता है।

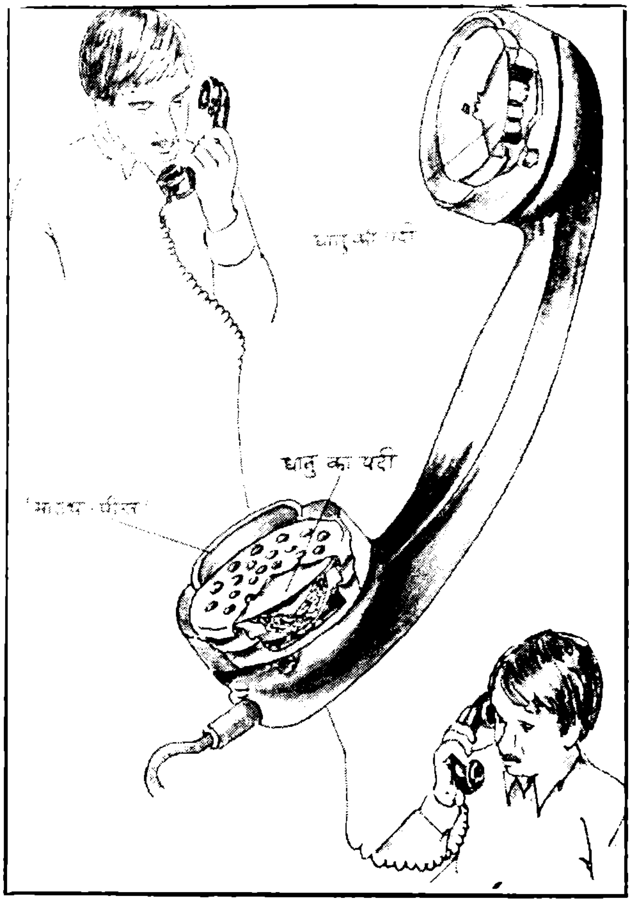


बेशक, कुछ वस्तुएँ ऐसी भी होती हैं, जिनमें विद्युत्-धारा आसानी से प्रवाहित की जा सकती है। उदाहरण के लिए – पीतल और ताँबे के तार तथा अन्य धातुएँ। हाँ, कुछ चीजें ऐसी भी होती हैं, जिनमें विद्युत्-धारा प्रवाहित नहीं हो पाती। जैसे – कपड़ा, काँच, लकड़ी इत्यादि।

विद्युत् की इस विशेषता का लाभ उठाया जाता है। रिसीवर और टेलीफोन ट्रांसमिटर में ताँबे के तार के जरिये सम्बन्ध बना दिया जाता है। इसका सम्बन्ध टेलीफोन में मौजूद पतले पर्दे से होता है।

'माउथ–पीस' (Mouth-piece) रिसीवर का एक भाग होता है। इस भाग की सहायता से बोला जाता है। 'माउथ–पीस' में एक कटोरी–सी होती है। कटोरी में दानों के रूप में 'कार्बन' भरा होता है। इस कटोरी का ढक्कन टेलीफोन के पर्दे के ठीक नीचे होता है। जैसे ही पर्दे से ध्वनि टकराती है, वह ध्वनि उतार–चढ़ाव के अनुसार उभरने और सिकुड़ने लगती है। चूँकि इससे लगा हुआ कार्बन की कटोरी का ढक्कन होता है इसलिए वह भी इसके साथ वही प्रक्रिया दुहराता है। परिणाम–स्वरूप कार्बन भी उभरने और सिकुड़ने लगता है।

ये सभी क्रियाएं यों ही नहीं हो जातीं। इनके पीछे कारण भी हैं। ज्योंही कार्बन दबता है, इसमें से विद्युत्–तरंगें तेजी से प्रवाहित होने लगती हैं। इसे इस तरह से समझने का प्रयास करो। ध्वनि–तरंगें विद्युत्–तरंगों में बदल जाती हैं। ये विद्युत्–तरंगें टेलीफोन के पर्दे से टकराती हैं। उसके बाद कार्बन से होकर ट्रांसमिटर तक पहुँच जाती हैं।

रिसीवर में जिस भाग से सुना जाता है, वहाँ लोहे के दो छोटे रॉड अनियमित आकार वाले चुम्बकीय पत्थर पर रखे होते हैं। इन रॉडों पर ताँबे के तार लिपटे होते हैं। दूसरे शब्दों में तुम इन्हें 'पोशाकी चुम्बक' कह सकते हो। इन पोशाकी चुम्बकीय पत्थर का सम्बन्ध सन्देश ले जाने वाले तारों से होता है।

लोहे के ये रॉड पहले से ही एक चुम्बकीय पत्थर पर रखे होते हैं। इस कारण से इनमें चुम्बकीय शक्ति होती है। जब विद्युत्–धारा इन तारों से प्रवाहित होती है तब इनकी चुम्बकीय क्षमता और भी तीव्र हो जाती है। इनके आगे लोहे का एक पतला-सा पर्दा रखा होता है। वह पर्दा इन रॉडों के प्रभाव से आगे–पीछे होने लगता है। पर्दा ध्वनि की पोशाकी तरंगों से आगे–पीछे होने लगता है। फिर वह ध्वनि हवा में फैलकर ट्रांसमिटर तक पहुंच जाती है। उसी ध्वनि को हम कान लगा कर सुनते हैं।

●

# 'ब्लैक बॉक्स' क्या है?

सन् 1960 ई. के दशक से दो यन्त्रों का चलन आरम्भ हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय उड़ान भरने वाले विमानों में दो यन्त्र रखे जाते हैं। इनमें से पहला है – डी. एफ. डी. आर. 'डिजिटल फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' (Digital Flight Data Recorder) दूसरे यन्त्र का नाम है – सी. वी. आर. 'कॉकपिट वाइस रिकॉर्डर' (Cockpit Voice Recorder)।

इन दोनों यन्त्रों को अलग–अलग अत्यन्त मजबूत काले रंग के इस्पात के बक्सों में बन्द कर दिया जाता है। सुरक्षा की दृष्टि से ऐसा किया जाता है। बक्से में रखे इन दोनों यन्त्रों को विमान के पिछले हिस्से में रखा जाता है। अपने काले रंग के कारण ही ये 'ब्लैक बॉक्स' कहलाते हैं।

'ब्लैक बॉक्स' चर्चा के केन्द्र में 23 जून, सन् 1985 ई. को आया। इसके चर्चित होने के पीछे एक दुर्घटना है। 23 जून, सन् 1985 ई. को एअर इण्डिया का जम्बो जेट 'कनिष्क' दुर्घटना–ग्रस्त हो गया। यह यन्त्र यान–दुर्घटना के विषय में बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारी दे सकता है। इस दृष्टि से इसे प्राप्त करने का हर–सम्भव प्रयास किया गया।

सागर की अनन्त गहराइयों से आने वाले संकेतों का अध्ययन किया गया। इससे इसकी स्थिति का पता लगाया गया। फिर इसे निकालने का प्रयास किया गया। कई दिनों तक इसे निकालने में सफलता नहीं मिल पायी। अन्ततः 'क्रैव' नामक रोबो ने इसे सागर की गहराई से बाहर निकालने में सफलता प्राप्त की। इस 'ब्लैक बॉक्स' को सागर से बाहर निकालने में फ्रांस, कनाडा, आयरलैण्ड, संयुक्त राज्य

अमरीका आदि देशों ने मदद दी। इसे ढूँढ़ने में विश्व की आधुनिकतम स्वचालित पनडुब्बियाँ, रोबो तथा अन्य यन्त्रों की सहायता ली गयी। इस प्रयास में करोड़ों रुपये खर्च हुए।

इससे पता चलता है कि ब्लैक बॉक्स में विमान-दुर्घटना से सम्बन्धित अत्यन्त महत्वपूर्ण रहस्य छिपे हुए हैं। इनसे प्राप्त आँकड़ों से विमान-दुर्घटना के कारणों का पता लगाने में भारी मदद मिलती है। विमान की हर उड़ान के बाद इन यन्त्रों में लगे टेप का नियमित विश्लेषण किया जाता है।

इस्पात के बक्सों में यन्त्रों की रक्षा के लिए मजबूत पदार्थों की कई पर्तें होती हैं। इनमें जंग नहीं लगता है। ये आसानी से टूट नहीं सकते हैं। ये यन्त्रों को आग-पानी से बचाते हैं। ऊँचाई से गिरने पर भी इनका कोई नुकसान नहीं होता। यदि इन बक्सों को 1000°C के ताप पर भी रखा जाए तो भी ये खराब नहीं होते।

इनकी मजबूती के क्या कहने ! ये इतने मजबूत होते हैं कि इन पर दो टन भार तक के झटके का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बाहरी विद्युत्-स्पार्कों से पैदा होने वाले चुम्बकीय क्षेत्र का भी इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इन यन्त्रों को बहुत ही अधिक सुरक्षा दी जाती है। रिकॉर्डरों में इस्तेमाल होने वाले टेप समुद्री पानी के सम्पर्क में आने पर भी 40 घण्टे तक खराब नहीं होते।

और अब मैं तुम्हें इन दोनों यन्त्रों के बारे में विस्तार से बताता हूं। पहले समझो 'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' को -

## फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर

'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' को यान के पिछले भाग में रखा जाता है। तुम पूछ सकते हो - इसे पिछले ही भाग में क्यों रखा जाता है ? तुम्हारा प्रश्न बहुत ही उत्तम है। यान का पिछला भाग अधिक सुरक्षित होता है। इसके लिए प्रयुक्त होने वाली विद्युत्-व्यवस्था विमान की व्यवस्था से अलग होती है। इसका अर्थ यह है कि यदि यान की बिजली बन्द हो जाए तो भी यह यन्त्र अपना कार्य करता रहेगा।

दर-असल, 'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' एक प्रकार का 'मल्टी चेनल रिकॉर्डर' होता है। यह यन्त्र बहुत ही जटिल होता है। इसमें प्रयुक्त टेप बहुत ही उत्तम प्रकार के होते हैं। ये टेप लचीले 'स्टेनलेस स्टील' के होते हैं। इस टेप पर एक बहुत ही पतली रेखा खुदी होती है। इस टेप में तीव्र आघातों को सहन करने की क्षमता है। टेप के दोनों ओर काफी जानकारी अंकित हो सकती है। यह टेप लगभग 2,000 मीटर लम्बा होता है। इस टेप में 25 घण्टे तक की उड़ान के आँकड़े अंकित करने की क्षमता होती है।

'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' विमान की उड़ान के समय से लेकर उतरने तक की अवधि के लगभग 64 विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ रिकार्ड करता है। इनमें यान का ताप, यान में लगे यन्त्रों का पाठ्यांक, वायु का वेग आदि रिकॉर्ड किये जाते हैं।

यह यन्त्र 15 किलोमीटर की ऊंचाई पर भी यान के सभी आंकड़े अपने-आप अंकित करता रहता है। इस यन्त्र में उड़ान के समय जहाज का कोणीय झुकाव भी अंकित होता रहता है। ये सब आँकड़े विमान के दुर्घटना-ग्रस्त होने पर दुर्घटना के विषय में महत्वपूर्ण सूचना देते हैं।

'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' के टेप में अंकित 64 विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को व्यवस्थित करना आसान नहीं होता। इसके लिए एक विशेष प्रकार के कम्प्यूटर का इस्तेमाल किया जाता है। कभी-कभी तो इस कम्प्यूटर को भी आंकड़ों का विश्लेषण करने में हफ्तों और महीनों का समय लग जाता है।

मुझे उम्मीद है, 'फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर' की कार्य-प्रणाली को तुम अच्छी तरह से समझ गये होगे। अब समझो दूसरे यन्त्र 'कॉकपिट वॉइस रिकॉर्डर' को ----

## 'कॉकपिट वॉइस रिकॉर्डर'

यह ब्लैक बॉक्स का दूसरा महत्वपूर्ण यन्त्र है। इसे 'ध्वनि-अंकन-यन्त्र' भी कहा जाता है। इसे विमान के 'कॉकपिट' में रखा जाता है। 'वाइस रिकॉर्डर' एक प्रकार का उत्तम 'टेप-रिकॉर्डर' है। इसमें एक चुम्बकीय टेप चलता है। यह टेप छल्ले के आकार का होता है। इसे चलाने के लिए 'स्पूल' (चकरी) नहीं होती है।

इस यन्त्र का भार एक किलोग्राम के लगभग होता है। फ्लाइट रिकॉर्डर की भांति इसे भी आघातों, बिजली के झटकों, ऊंचे ताप आदि से सुरक्षित रखने की व्यवस्था होती है। यह यन्त्र चालक-दल के बीच होने वालीबातों को रिकॉर्ड करता है। नियन्त्रण-कक्ष (Control-Room) से आने वाले सन्देशों को भी यह यन्त्र रिकॉर्ड करता है। विमान की दुर्घटना से पहले यदि कोई चेतावनी (Alarm) दी गयी तो वह भी इसमें रिकॉर्ड हो जाती है। इन सभी ध्वनियों को 'वाइस रिकॉर्डर' तक भेजने के लिए 'कॉकपिट' में माइक्रोफोन लगे होते हैं। ये माइक्रोफोन ध्वनि-तरंगों को विद्युत्-सन्देशों में बदल देते हैं।

इस यन्त्र में केवल पिछले आधे घण्टे का वार्त्तालाप अंकित रहता है। आधे घण्टे से पहले का वार्त्तालाप टेप से अपने -आप ही मिटता चला जाता है। फिर आगे की वार्त्तालाप अपने-आप ही रिकॉर्ड होती जाती है।

इस कार्य के लिए इस यन्त्र में विशेष विद्युत्-परिपथ होते हैं। इस प्रकार इस यन्त्र में एक ही टेप बार-बार इस्तेमाल होता रहता है। रिकॉर्डिंग के लिए प्रिण्टेड सर्किट के बजाय तारों द्वारा ही व्यवस्था की जाती है। यदि कभी यान दुर्घटना-ग्रस्त हो जाता है तो दुर्घटना के कारणों का पता इन दोनों यन्त्रों की सहायता से लग जाता है। यही कारण है कि दुर्घटना के बाद इन दोनों यन्त्रों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। फिर इन दोनों रिकॉर्डरों में अंकित सूचनाओं को व्यवस्थित करके जानकारी प्राप्त कर ली जाती है। उन सूचनाओं का आपस में ताल-मेल बिठा कर विमान-दुर्घटना के कारणों का पता लगाया जाता है। इन यन्त्रों की मदद से दुर्घटना कब-कहाँ और कैसे हुई - इनकी लगभग पूरी जानकारी मिल जाती है।

# 'रेलगाड़ी' की कहानी

रेलगाड़ी का इंजन जेम्स वॉट ने बनाया था। एक दिन की बात है। जेम्स वॉट अपने रसोई-घर में बैठा हुआ था। आग पर रखी केतली के ढक्कन को वह बार-बार ऊपर-नीचे होते ध्यान से देख रहा था। बाद में उसने उस पर काफी सोचा-विचारा। जब उसने भाप की शक्ति पहचान ली तब इंजन बनाने का निर्णय लिया।

वैसे तो सबसे पहले ग्रीक के वैज्ञानिक हैरो ने आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व ही इंजन बनाया था, लेकिन उसके बनाये इंजन को देखकर लोगों ने उसका बड़ा मजाक उड़ाया। उसका इंजन जो भद्दा था। इस पर हैरो को गुस्सा आया। उसने इंजन को नष्ट कर दिया।

जेम्स वॉट के बनाये हुए इंजन की भी लोगों ने खिल्ली उड़ायी, पर उसने धैर्य से काम लिया। उसने अपनी बुद्धिमानी से तरह-तरह के इंजन बनाये।

सन् 1804 ई. में पहली रेलगाड़ी बनी। उसको रिचर्ड ने बनाया था। वह रेलगाड़ी कुछ ठीक नहीं थी। इस कारण उसने एक दूसरी रेलगाड़ी तैयार की। दूसरी रेलगाड़ी का नाम उसने रखा : "मुझे कौन पकड़ सकता है" ?

जिन दिनों रिचर्ड रेलगाड़ी बनाने की तैयारी कर रहा था, उन्हीं दिनों वैज्ञानिक स्टीफेंसन भी रेलगाड़ी बना रहा था। यद्यपि स्टीफेंसन ने काफी देर बाद रेलगाड़ी तैयार की, किन्तु उसकी बनायी हुई रेलगाड़ी लोगों को बहुत पसन्द आयी। इस तरह से 'रेलगाड़ी के आविष्कारक' की उपाधि स्टीफेंसन को दी गयी।

स्टीफेंसन की रेलगाड़ी में जो इंजन लगा हुआ, उसका नाम 'रॉकेट' रखा गया था। स्टीफेंसन ने सन् 1825 ई. में एक रेलगाड़ी तैयार की।

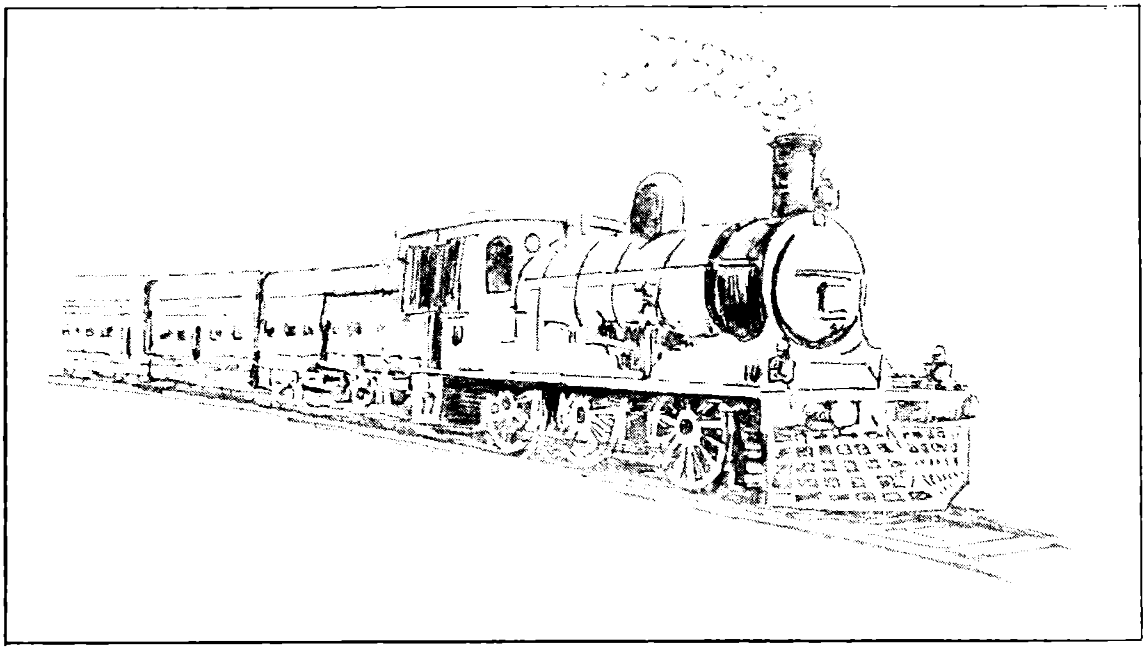

तुम सोचते होगे कि आज की तरह उन दिनों भी रेलगाड़ी में आराम-देह सीट, पंखे, प्रकाश, दरवाजे, खिड़कियाँ आदि होती थीं। नहीं, ऐसा तुम्हारा सोचना बेकार है। उन दिनों रेलगाड़ी में फर्श पर बैठना पड़ता था। रेलगाड़ी के डिब्बे मालगाड़ी की तरह खुले रहते थे। खिड़की, प्रकाश, आदि की सुविधा नहीं थी। यहाँ तक कि खतरे की जंजीर भी नहीं होती थी। मजे की बात है कि रेलगाड़ी का चालक सीटी की जगह घण्टा बजाता था।

अपने देश 'भारत' में पहली रेलगाड़ी 16 अप्रैल, सन् 1853 ई. को आयी थी। वह रेलगाड़ी बम्बई से थाना तक चलायी गयी थी।

कहा जाता है कि जब वह रेलगाड़ी चली थी तब उसे 21 तोपों की सलामी दी गयी थी।